राग–रागिनी वर्गीकरण पद्धति–एक अवलोकन

डा0 किरन शर्मा
असि0 प्रोफे0, संगीत विभाग
आर0जी0पी0जी0 कॉलिज मेरठ
Email:arunita93@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:

डा0 किरन शर्मा,

राग–रागिनी वर्गीकरण पद्धति–एक अवलोकन

Artistic Narration 2019, Vol. X, pp.66-69

http:// artistic.anubooks.com/

सारांश

भारतीय संगीत में राग वर्गीकरण की अनेक पद्धतियाँ रही है। इन पद्धतियों में राग–रागिनी वर्गीकरण का विशेष स्थान है। विविध ग्रंथों में प्राप्त उल्लेखों से इस पद्धति की प्राचीनता का पता चलता है। इस पद्धति में रागों को स्त्री पुरूष रागों के रूप में मान्यता प्रदान की गयी। यद्यपि वर्तमान में यह पद्धति प्रचलित नहीं हैं किन्तु विविध ग्रंथों से प्राप्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इसका प्रभाव दीर्घकाल तक रहा है। सृष्टि की उत्पत्ति के मूल में प्याप्त एक से दो, तथा दो से बहु और बहु से अनंत का सिद्धांत ही राग–रागिनी वर्गीकरण का आधार है। राग–रागिनी वर्गीकरण का विस्तृत उल्लेख नारद कृत 'संगीत मकरंद ग्रंथ में प्राप्त होता है। इन्होंने छः प्रमुख राग, छत्तीस रागिनियों का उल्लेख किया है। महाराणा कुंभा के ग्रंथ 'संगीत राज' में भी राग–रागिनियों को देवी–देवताओं के ध्यान रूपों में वर्णित किया गया है। प0 दामोदर ने 'संगीत दपर्ण' में शिव तथा शक्ति के संयोग से रागों की उत्पत्ति मानी है। मध्यकाल में भी राग वर्गीकरण की यह पद्धति प्रचलित थी स्वामी हरिदास एवं तानसेन के ग्रंथों में भी राग–रागिनियों का उल्लेख किया गया है।

राग द्वारा होने वाली अभिव्यक्ति को विविध रसों, भावों तथा यथासंभव काकु प्रयोग के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। रागों की अभिव्यक्ति में पुरूष रागों में वीर, अदभुत, रौद्र रसों तथा स्त्री रागों में श्रृंगार, ह्रास, करूण रसों का प्रयोग हुआ है। रागों के भावमय व्यक्तित्व के श्रवण गोचर रूप को भी अभिव्यक्ति के माध्यम से भावदेह रूप में साकार किया गया है। अभियनाथ सान्याल ने अपने ग्रंथ 'रागाज एंड रागिनीज़' में इस अभिव्यक्ति को कलाकार के ऊपर निर्भर किया है कि वह एक राग की अभिव्यक्ति राग रूप में करे अथवा रागिनी रूप में। इस पद्धति के प्रचलन से समाप्त होने का एक यह भी कारण हो सकता है कि यह स्पष्ट नहीं है कि किस आधार पर किसी राग को पुरूष अथवा स्त्री राग माना गया। एक पौराणिक दृष्टिकोण की प्रधानता तथा शास्त्रीय विश्लेषण की उपेक्षा संभवतः राग–रागिनी वर्गीकरण के अप्रचलित होने का कारण रही है। इसकी प्रमुख विशेषता रागों का वर्गीकरण एक परिवार की भांति किया जाना है। इस पद्धति का प्रभाव अत्यंत दीर्घकाल तक रहा है। राग–रागिनी वर्गीकरण की पद्धतियों में निस्संदेह एक विशिष्ट स्थान रखता है।

मुख्य शब्द– *राग वर्गीकरण, प्राचीनकाल, पौराणिक आधार संगीत, मकरंद, स्त्री पुरूष राग विभाजन, भाव, रस, अभिव्यक्ति।*

प्रस्तावना

भारत वर्ष की संगीत परम्परा अनादि काल से चली आ रही है जिसका सूत्रपात वेदों से प्राप्त होता है। राग भारतीय संगीत का परम विकसित रूप है। रागों की उत्पत्ति जातियों से मानी गयी है। भारतीय संगीत में राग वर्गीकरण की अनेक परम्पराए रही है। राग रागिनी वर्गीकरण परम्परा उनमें से एक है। विविध ग्रंथो में उल्लेखों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि इस वर्गीकरण की परम्परा प्राचीन है। राग–रागिनी वर्गीकरण का प्रभाव दीर्घकाल तक रहा है। इस वर्गीकरण का मूल रागों द्वारा होने वाली भावयिव्यक्ति को स्त्री तथा पुरूष के प्रतीक रूप में व्यक्त करना है। इस वर्गीकरण की यही विशेषता है कि इसमे रागों को स्त्री पुरूष के रूप में मान्यता दी गयी है। यद्यपि इस मत के अधिकांश प्राचीन ग्रंथ आज उपलब्ध नही है परन्तु अनेक संगीत ग्रंथो में इसके उल्लेख से इसकी प्राचीनता की पुष्टि होती है।

सृष्टि की उत्पत्ति तथा विकास के लिए शिव–शक्ति, प्रकृति–पुरूष माया–ब्रहमा आदि तत्वों को आवश्यक माना गया। सृष्टि का मूल में ही 'एक' से 'दो', 'दो' से 'बधु' तथा बहु से अनंत की उत्पत्ति के क्रम रहा है। यही सिद्वांत प्राचीन काल मे रागों के वर्गीकरण का आधार बना। राग को एक परिवार मानकर उसकी रागिनियाँ, पुत्र राग तथा पुत्रवधु राग आदि मानकर उन्हे अलग–अलग भागो में बांटा गया।

रागों की उत्पत्ति शिव तथा शक्ति के संयोग से हुई ऐसा माना जाता है। महादेव शिव के पांच मुख से पांचोराग तथा छठा राग माता पावर्ती के मुख से उत्पंन हुआ, ऐसा संगीत दपर्ण ग्रंथ में बताया गया है। प्रत्येक राग की छः रागिनयां बताई गयी हैं विद्वानों के अनुसार आठवीं शताब्दी में नारद कृत 'संगीत मकरंद' नामक ग्रंथ मे छः राग और छत्तीस रागिनियों का उल्लेख किया है जिसमें रागों का विभाजन तीन वर्गो में किया गया है– (1) पुल्लिंग राग (2) स्त्रीलिंग राग (3) नपुंसक राग। इन तीनो राग समुदायों का सम्बन्ध तीन विशेष भाव, रस विनियोग से जोड़ा गया है। पुरूष रागों का सम्बन्ध आश्चर्य, साहस क्रोध (वीर, अदभुत, रौद्र) रसों से, स्त्री रागों का प्रेम, हास तथा दुख से (श्रंगार रास, व करूण) रसों से तथा नपुसंक रागों को भयानक, वीभत्स अथवा शांत भाव से जोड़कर गान करना बताया गया है। यद्यपि इस ग्रंथ में रागो के ध्यान उपलब्ध नही है। आचार्य ब्रहस्पति के अनुसार ''पंचमसार संहिता'' भी नारदकृत ग्रंथ है जिसमे रागों के ध्यान की चर्चा की गयी है, किंतु राग रागिनी वर्गीकरण में 'संगीत मकरदं' का महत्वपूर्ण स्थान है। पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग रागो का मौलिक भेद ही राग–रागिनियो के स्वरूप का मुख्य आधार है। प्रत्येक राग अथवा रागिनी का एक विशेष व्यक्तित्व है जो उसके ध्वनि रूप का अधिष्ठाता है। गायक अपनी स्वर संगति के निर्धारित अनुष्ठान के माध्यम से उस विशेष राग अथवा रागिनी की अभिव्यक्ति करता है।

महाराणा कुंभा द्वारा रचित ग्रंथ ''संगीतराज'' में भी राग–रागिनियों के ध्यान का वर्णन है जो कि देव–देवी रूपों की उपासना से मूल रूप से जुड़ी है। अनेक रागों के ध्यान शिव, विष्णु, ब्रहमा जैसे

प्रमुख देवताओं के रूप में वर्णित है। जैसे भैरव राग का वर्णन अष्टभुज शिव रूप में, 'नटनारायण' का वीणाधरी नारायण रूप में तथा 'श्री' राग का ध्यान वीणाधरी पितामाह ब्रहमा के रूप में बताया गया है तथा रागिनियों के ध्यान देवी रूपो मे–भैरवी, तोड़ी कैशिकी आभीरी, रामकृति, देवकृति आदि वर्णित है

पं0 सोमनाथ ने भी राग रागिनी व्यवस्था का उल्लेख अपने ग्रंथ 'राग बिबोध' में किया है इसमें रागों के नादमय एवं देवमय रूपों की चर्चा की गयी है। इन्होने मुख्य छः राग, प्रत्येक की पांच–पांच रागिनयाँ, तथा पांच–पांच पुत्र रागों का उल्लेख किया है। पुडरीक विठ्ठल ने भी अपने ग्रंथ 'रागमाला' में पुरूष रागों स्त्री रागों, तथा पुत्र रागों का वर्णन किया है इनके छः पुरूष रागो में भैरव, हिंडोल, देश, श्री शुद्धनाट, तथा नट नारायण हैं, रागमाला में राग रागिनियों को चित्रों के माध्यम से दर्शाया गया है।

पं0 दामोदर द्वारा रचि 'संगीत दपर्ण' भी राग–रागिनी वर्गीकरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस ग्रंथ मे शिव तथा शक्ति के संयोग से रागों की उत्पत्ति मानी गयी है। संगीत दपर्ण में रागिनियों के ध्यान वियोगिनी, संयोगिनी, वीरांगना, भाक्तिमति आदि रूप में दिए गये हैं। संगीत दपर्ण की ध्यान परम्परा मानव जीवन के अधिक अनुकूल है। सामान्य जन जीवन के सुख–दुख, रास–विलास, भक्ति–वैराग्य, आदि भावों का समन्वय इसमें प्रधान है। इस ग्रंथ की रचना मध्य काल मे हुई थी मध्य काल में भक्ति की विविध धाराओं की प्रधानता थी। अतः इस समय रागों के भक्ति मय संगीत की परम्परा विशेष रूप से लोकप्रिय हुई। मध्यकाल के प्रसिद्ध संगीतज्ञो में स्वामी हरिदास तानसेन आदि भी राग रागिनी पद्धति के पोषक थे। तानसेन परम्परा के उस्ताद दबीर खाँ के शब्दो में तानसेन का संगीत छः राग तथा छत्तीस रागिनियों पर आधारित था उनके ग्रंथ संगीत सार में श्री बसंत, पंचम, भैरव, मेघ, नटारायण को शिव मुख से उत्पंन्न बताया है तथा भैरव की रागिनियों के संदर्भ में मधुमाधवी, भैरवी, बंगाली बरारी, सैंघवी के नामों, का उल्लेख है। स्वामी हरिदास कृत 'केलिमाल' मे भी राग रागिनी शब्द का उल्लेख मिलता है।

हम देखते हैं कि राग–रागिनी वर्गीकरण करनें वालो ने प्रत्येक राग रागिनी का भिन्न–भिन्न भावरूपी व्यक्तित्व निरूपति किया। भले ही रागों को स्त्री, पुरूष के भेदो से अलग रखा जाये किन्तु उन रागो में लगने वाले स्वरों, स्वरूपों तथा यथासंभव काकुभेद का प्रयोग करने में एक स्पष्ट छवि अर्न्तमन में प्रत्यक्ष होती है, इस छवि की व्युत्पत्ति में विविध रसों का भी योगदान रहता है। राग पद्धति हमारे भारतीय संगीत की विशेषता है। राग द्वारा होने वाली भावाभिव्यक्ति को पुरूष और स्त्री के प्रतीक द्वारा व्यक्त कररना ही राग–राशिनी पद्धति का मूलाधार है। संगीत द्वारा होने वाली भावभिव्यक्ति इतनी सूक्ष्म होती है कि उसे शब्दों द्वारा व्यक्त करना असंभव है उसके लिए प्रतीकों का सहारा लेना पड़ता है। रागों की अभिव्यक्ति में गंभीरता, कठोरता, धीर–भाव, स्थिरता आदि को पुरूष के प्रतीक द्वारा तथा कोमलता, तरलता तथा करूणा इत्यादि भावों को स्त्री के प्रतीक कहा गया।

संगीत एक भाव प्रधान कला है जिसमें कलाकार की कल्पनात्मक अभिव्यक्ति तथा सुनने वाले को होने वाली रसानुभूति विशेष महत्व रखती है। सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति भी स्वरों के माध्यम से संभव है। रागाभिव्यक्ति में कलाकार रागों के स्वरूप को मूर्त रूप देने के स्वरों के माध्यम से एक ऐसा प्रभाव उत्पन्न कर देता है कि श्रोताओ के अन्तर्मन में एक चित्र सा साकार हो उठता है। इसी प्रकार राग रागिनी

वर्गीकरण में रागों के भावमय व्यक्तित्व जो कि श्रवणगोचर है, उन्हे मूर्त रूप देने के लिए ही स्त्री एवं पुरूष राग–रागिनी के रूप में रागों के भावदेह को साकार किया गया।

यद्यपि आज राग–रागिनी पद्धति प्रचार में नही है किंतु इसकी वैज्ञानिकता के आधार पर यह कहा जा सकता है कि राग–रागिनी वर्गीकरण निराधार नही है इसके अप्रचलित हो जाने का कारण यही जान पड़ता है कि इसके प्रवर्तकों ने अपने विचारो अथवा मान्यताओं को तर्क के आधार पर शास्त्रीय रूप प्रदान करने का यत्न नही किया पौराणिक कथाओं की भांति रागों का उनकी रागिनियों तथा पुत्र परिवार के रूप में उल्लेख किया गया। किसी राग विशेष का सम्बन्ध किसी रागिनी से किस साम्य के आधार पर जोड़ा गया इसका कोई स्पष्ट विवरण नही प्राप्त होता है। संगीत में अभिव्यक्ति का मुख्य माध्यम स्वर है। अभियनाथ सान्याल ने अपने ग्रंथ 'रागाज एंड रागिनीज' में लिखा है कि राग में लगने वाले स्वरों में उनका रागत्व निहित होता है प्रत्येक राग का एक मूलभूत स्वर समूह होता है इस समूह का गठन निष्चित नियमों के अनुसार एक दूसरे के साथ बंधे हुए स्वरों से होता है। स्वरों को वादी संवादीत्व भी इस मूलभूत स्वर समूह पर निर्भर होता है किंतु इस मूलभूत स्वर समूह पर निर्भर होता है किंतु इस मूलभूत स्वर समूह के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि यह राग है अथवा रागिनी। उन्होंने इसे कलाकार के व्यक्तित्व एवं उसकी प्रकृति पर निर्भर कर दिया है कि वह एक राग की अभिव्यक्ति राग रूप में करें अथवा रागिनी के रूप में।

राग–रागिनी वर्गीकरण के विभिन्न मतों में भी उनमें भिन्नता का क्या शास्त्रीय या वैज्ञानिक आधार है यह स्पष्ट नहीं है ग्रंथकारों ने मतभेद दिखाते हुए भी उसके आधार अथवा कारणों का कोई उल्लेख नहीं किया है इससे यह प्रतीत होता है कि राग रागिनी की कल्पना एक प्रतीक मात्र पर आधारित होने के कारण विविध मतों में भी संभवतः पौराणिक दृष्टिकोण अपनाया गया तथा किसी शास्त्रीय विश्लेषण की अपेक्षा नहीं रखी गयी। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इस परम्परा में सभी मतों में रागों का वर्गीकरण एक परिवार की भांति किया गया है यही इसकी विशेषता है। निस्संदेह ही यह वर्गीकरण हमारी सबसे प्राचीन राग वर्गीकरण पद्धतियों में प्रमुख स्थान रखता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. राग रागिनी वर्गीकरण – डा0 प्रदीप कुमार दीक्षित
2. संगीत (राग–रागिनी अंक–1972)
3. संगीत – मई 1985
4. संगीत – अगस्त 1968
5. संगीत – 1973
6. भारतीय संगीत एक ऐतिहासिक विष्लेशण–डा0 स्वतंत्र षर्मा